गायत्रीतीर्थ शान्तिकुञ्ज

youth.awgp.org

# माँ की संस्कारशाला

सप्ताह-3

मानवीय मूल्य

# संगति

Online पढ़ने हेतु QR कोड स्कैन करें।

• मानवीय मूल्य • वेदवाक्य • पहेली / मुहावरे • कहानी • मनोवैज्ञानिक समाधान
• मूल्यपरक कविता / गीत / लोरी • अभ्यास के बिन्दु

शान्तिकुञ्ज-हरिद्वार

# विषय सूची - तृतीय सप्ताह

**तृतीय सप्ताह :**
मानवीय मूल्य-संगति ............ 60

माँ से निवेदन ............ 61

बच्चे आपके सच्चे मित्र ............ 62

**प्रथम दिवस :**
कहानी : मित्र की पहचान ............ 64

**द्वितीय दिवस :**
कहानी : दो सहेलियां ............ 66

**तृतीय दिवस :**
कहानी : मित्रता की कला ............ 68

**चतुर्थ दिवस :**
कहानी : तीन मित्र ............ 70

**बच्चों की समस्याओं के मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक समाधान :**
बच्चों के मित्र बनें ............ 72

**पंचम दिवस :**
कहानी : मित्र की मर्यादा ............ 75

**षष्ठम दिवस :**
कहानी : बैल की ऊर्जा ............ 77

**सप्तम दिवस :**
कहानी : मित्रता की परख ............ 79

**मूल्यपरक कविता :**
कृष्ण और सुदामा ............ 82

**गीत :**
तोता ............ 83

अभ्यास के बिन्दु ............ 83

# तृतीय सप्ताह

## मानवीय मूल्य

## संगति

# माँ से निवेदन

यह संसार गुण दोषमय बनाया गया है। इसमें जहाँ अच्छे और भले लोगों का निवास है वहाँ बुरे और गन्दे लोग भी रहते हैं। जहाँ सुख-शान्ति और स्वास्थ्य के साधन हैं वहाँ रोग दोष और कलह क्लेश की परिस्थितियाँ भी पाई जाती हैं । इसीलिये संसार में पग-पग पर सावधान रहकर चलने का निर्देश किया गया है। जो मनुष्य इस गुण दोषमय संसार में सावधान रहकर बुद्धिमत्तापूर्वक चला करते हैं वे संसार के दोष दुर्गुणों से प्रभावित नहीं होते और शान्ति तथा सुखकर जीवन के अधिकारी भी बनते हैं ।

जीवन-यापन में सावधानी बरतने का यही अर्थ है कि हम दोष दुर्गुणों तथा ऐसी प्रवृत्तियों से सदा बचते रहें जो जीवन विकास में बाधक बनकर पतन अथवा निरर्थकता की ओर उन्मुख करने वाली हों ।

हम सब जिस समाज में रहते हैं उसमें भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों, स्वभावों, रुचियों, आदर्शों, उद्देश्यों तथा मानसिक स्तर के लोग रहते हैं। वे अपनी-अपनी बुद्धि तथा मानसिक स्तर के अनुसार संसार के गुण-दोषों से प्रभावित भी रहते हैं और उसी प्रकार अच्छे-बुरे होकर समाज में व्यवहार किया करते हैं ।

समाज के नाते हमें हर प्रकार के मनुष्यों के संपर्क एवं संसर्ग में आने के लिये विवश होना पड़ता है। यदि कोई यह चाहे कि उसके जीवन में सदा सर्वदा गुणी और सत्पुरुष ही आयें और बुरे तथा दुष्ट व्यक्तियों का समागम न हो तो यह संभव नहीं। समाज में दोनों प्रकार के व्यक्ति रहते हैं इसलिये बुरे लोगों का संपर्क में आना अस्वाभाविक नहीं है। वे आयेंगे, परिस्थितियाँ उन्हें ला सकती हैं, आवश्यकता विवश कर सकती है। ऐसी स्थिति में हमारा यही कर्तव्य रहता है कि हम संपर्क में आये व्यक्ति के दोषों से बचे रहें। अपने में इतनी दृढ़ता बनाये रहें कि उनके दोष हमें प्रभावित न कर सकें ।

# बच्चे आपके सच्चे मित्र

## बच्चों की संगति का सदा ध्यान रखिये

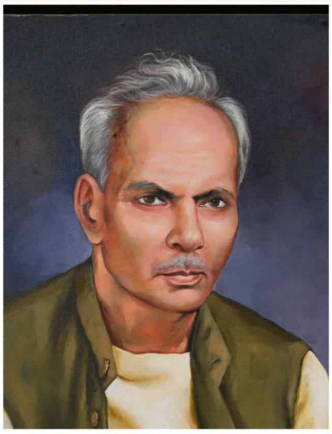

- पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य

बच्चों के स्वभाव का निर्माण संगति के आधार पर होता है। जिस बच्चे की जैसी संगति होती है वह वैसा ही बन जाता है। जो अच्छे संगी साथी पा जायेगा अच्छा बन जायेगा और बुरे साथी पाकर बुरा बनेगा। इसलिए अभिभावकों को चाहिए कि वे बच्चों की संगति पर तो नजर रखें ही उसे अच्छे साथी चुनने में भी सहायता दें। बच्चों में अपनी मौलिक सूझ-बूझ नहीं होती जैसा देखते सुनते हैं वैसा ही करने लगते हैं।

- आप जिन बच्चों को अपने बच्चों का साथी बनाना पसन्द करें उनके साथ अच्छा व्यवहार करें, उनमें अधिक रुचि प्रदर्शित करें। जब तब उनकी चर्चा करें। ऐसा करने से आपके बच्चे अनायास ही उनकी ओर आकर्षित होने लगेंगे। उनकी संगति में इसलिए रहने लगेंगे कि वे जानेंगे कि अमुक बच्चों के साथ देखकर मेरे माता-पिता प्रसन्न होंगे।

- माता-पिता उसके सबसे पहले संगी साथी होते हैं। बच्चा शुरू से जिस प्रकार की संगति में पड़ जाता है, वैसी ही संगति प्रायः अन्त तक बनी रहती है। इसका विशेष कारण यह होता है कि शुरू में जिन संस्कारों तथा रुचियों को ग्रहण करता है वे उसके स्वभाव की अंग बन जाती हैं।

- बच्चे शुरू से ही अच्छी संगति पायें, अच्छे मित्रों के अभ्यासी बनें, अच्छी आदतों तथा सुन्दर गुणों के पारखी बनें- इसलिए हर माता-पिता को स्वयं अच्छा बनना चाहिए और बच्चे के अच्छे साथी सिद्ध होना चाहिये। निश्चय ही आप चाहेंगे कि आपका बच्चा शिष्ट तथा सदाचारी बने। सत्य में निष्ठा रखे, हंसमुख, प्रसन्न चेता तथा मधुर भाषी बने। साथ ही यह भी आप जानते हैं कि बच्चा जल्दी ही संस्कार ग्रहण करता है अनुकरण तो उसका सहज स्वभाव ही होता है। अस्तु, आपका कर्त्तव्य हो जाता है कि आप दाम्पत्य जीवन में संयम का आदर करें। परस्पर प्रेम तथा मधुरता पूर्वक रहें। घर का वातावरण, सहायता, सत्य तथा सहयोग की भावना से भरापूरा रखें। न स्वयं असत्याचरण करें और न किसी को करने दें। निश्चय ही आपके बच्चे सद्गुणी बन जायेंगे। उनकी रुचियां इस प्रकार से ढल जायेंगी कि फिर आगे चलकर अवांछनीय तत्व उन्हें प्रभावित न कर सकेंगे और यदि कोई अवांछनीय उन्हें प्रभावित भी करेगी तो जल्दी ही थोड़े से प्रयत्न से वे पुनः सुधर जायेंगे।

- जो माता-पिता अपने दाम्पत्य जीवन में पवित्रता तथा संयम को स्थान नहीं देते, अनर्गलता तथा अनुशासनहीनता को बहिष्कृत नहीं रखते। स्वयं भी अस्त-व्यस्त रहते और दूसरों की अव्यवस्था को भी सहन करते हैं। उनको यह इच्छा नहीं करनी चाहिए कि उनके बच्चे आदर्श बच्चे बनें। बच्चे के प्रारम्भिक संगी साथी-माता-पिता जिस प्रकार का आदर्श बच्चों के सम्मुख उपस्थित करेंगे बच्चे सदा सर्वदा के लिए वैसे ही बन सकते हैं। माता-पिता के आचरण का आदर्श उनके लिए सबसे ज्यादा मान्य तथा असंदिग्ध होता है।

- पांच साल की आयु के बाद बच्चा घर से बाहर निकलने, खेलने-कूदने और स्कूल जाने लगता है और बाहर के बच्चों के साथ मिलकर अपनी समवयस्क मित्र मंडली संगठित करता है। यदि

आपने शुरू में अपने बच्चों को अच्छी संगति देकर उनके संस्कार सद्गुणों में ढाल दिए हैं, उनकी रुचि परिमार्जित कर दी है, स्वभाव संभाल दिया है और अच्छाइयों का पारखी बना दिया है-तो निश्चय ही वह उन्हीं मानदण्डों के आधार पर अपने बाह्य मित्रों का चुनाव करेगा और स्वयं भी दूसरे बच्चों के लिए अच्छा मित्र सिद्ध होगा।

- बच्चों की मित्र मंडली पर नजर रखी जाये। बच्चा आखिर बच्चा ही होता है कोई यन्त्र तो होता नहीं कि जिस जिस दिशा में चला दीजिए चलता जायेगा, बदलने का प्रश्न ही नहीं। फिर बुराइयां प्रबल भी होती हैं और उनकी रूप जाति भी बहुत होती हैं। ऐसी बहुत-सी बुराइयों को वह मित्रों में नहीं भी पहचान सकता जिनका परिचय घरेलू संगति में न हो पाया हो। इसलिए कि बच्चा अच्छे संस्कारों में ढल गया है-इस बात से निश्चिन्त नहीं रहना चाहिए। उसके संगी साथियों की जांच करते रहना चाहिये। यदि देखें कि बच्चे के कोई साथी गलत हैं, तो पहले तो उन्हें सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए, और यदि वे असाध्य सिद्ध हों तो उन्हें किसी न किसी प्रकार बच्चे की संगति से दूर कर देना चाहिए या बच्चे को उसकी संगति से हटा लेना चाहिए।

- कभी-कभी सबके साथ स्वयं भी बैठिये और तब अच्छे तत्वों की प्रशंसा कीजिये और इस ढंग से उनके गुणों की समीक्षा कीजिए कि उन्हें तो अभिमान न हो किन्तु अन्य अवांछित तत्वों को अपने उस अभाव पर खेद, ग्लानि तथा लज्जा जरूर हो। दो एक बार ऐसा करने से सारे साथी समझ जायेंगे कि आप किन्हें पसन्द करते हैं और किन्हें नहीं। ऐसी दशा में गलत साथी या तो अपना सुधार करने का प्रयत्न करेंगे अथवा लज्जावश स्वयं अलग हो जायेंगे।

- बच्चों के गलत मित्रों की आलोचना अथवा भर्त्सना तो कभी नहीं करनी चाहिए नहीं तो आपके बच्चे के समेत सारे मित्र अपने को अपमानित समझेंगे और उनकी सहज सहानुभूति उन लड़कों की ओर चली जायेगी जिनकी भर्त्सना की गई होगी। इसका परिणाम अलगाव नहीं निकटता ही हो सकता है। इस सम्बन्ध में विधेयात्मक रीति ही ठीक रहेगी निषेधात्मक नहीं।

- आपके बच्चे की संगत खराब न होने पावे, उसके साथी अच्छे ही हों अथवा अच्छे ही बने रहें इसका एक तरीका यह भी है कि आप स्वयं उसके साथ उसके मित्रों के मित्र बने रहिए, उनके साथ बच्चों की तरह ही हंसिये, बोलिये, खेलिये और अवसर पाकर उनके सहभोज में शामिल होइये। बच्चों का मनोरंजन ही अपना मनोरंजन बना लीजिए। उनको पढ़ाइये, उनको बैठ करके कुछ समझाइये और कभी-कभी साथ लेकर वायु सेवन अथवा निसर्ग निरीक्षण करने जाइये। तात्पर्य यह कि आप उनमें उनके समवयस्क मित्रों की तरह घुल-मिल जाइये।

# कहानी
## प्रथम दिवस

*ईजानानां सुकृतां प्रेहि मध्यम्*

*- यजु० ३२*

*सदाचारी लोगों के ही साथ रहो। साँप की तरह दुराचारियों से भी दूर रहो ।*

**पहेली ?**
हरा-भरा है चबूतरा, भीतर लाल मकान । इधर-उधर उसमें बैठे काले-काले पठान । वह क्या ?

## मित्र की पहचान

अमरकण्टक वन में एक पेड़ के नीचे रानी चींटी का घर था । एक बार अमरकण्टक वन में अकाल पड़ा । उसकी वजह से जीव-जन्तुओं को खाना मिलना भी मुश्किल हो गया । रानी की सारी सेना, सारे ही परिवार के सदस्य उस अकाल में मर गये, रह गयी अकेली रानी चींटी ।

पहले तो रानी बड़ी ही उदास उदास रहती थी । फिर एक दिन वह सोचने लगी कि जो मुसीबत आने वाली है, वह तो आयेगी ही । आपत्ति को यदि हँसते-हँसते सहा जाये तो कठिनाई कम होती है । मुसीबत में साहस खोने पर और अधिक परेशानी ही बढ़ती है  फिर मैं अपना धैर्य क्यों खोऊँ ? जीना है तो हँसते-हँसते ही जीऊँ, बहादुरी से जीऊँ । जो होना था वह तो हो ही गया ।'

रानी ने यह भी सोचा था कि अब अमरकण्टक छोड़कर और कहीं चला जाये । यहाँ परिवार का कोई और सदस्य तो बचा नहीं है । उल्टे यहाँ रहने से मित्रों की याद और सताती रहती है ।

रानी चींटी अपना घर छोड़कर चल दी । चलते-चलते वह अमरकण्टक वन से बहुत दूर चली गयी । रास्ते में उसने अनेक नगरों को पार किया। शहर की हलचल में रानी का मन लगता न था । इसलिये उसने सतपुड़ा की पहाड़ियों पर निवास करना ही पसन्द किया ।

एक दिन सुबह-सुबह रानी सतपुड़ा के पहाड़ी प्रदेश पर पहुँची । रानी के प्रवेश करते ही एक चींटी मिली । वह कहने लगी- 'तुम कहाँ से आ रही हो बहिन ? लगता है बड़ी थकी हुई हो, आओ मेरा आतिथ्य स्वीकार करो ।'

रानी बतलाने लगी- 'मैं अमरकण्टक वन से कई दिनों से लगातार यात्रा करके आ रही हूँ । मेरे सभी सम्बन्धी मर चुके हैं । अब तो तुम मेरी सहेली ही बन जाओ जिससे मुझे भी कुछ राहत और खुशी होगी ।'

दूसरी चींटी कहने लगी- 'तुम्हें अपनी सहेली बनाकर मुझे भी खुशी होगी । मुझे संगीता कहते हैं। चलो तुम मेरे घर चलो, वहीं पर रहना।'

रानी ने आगे बढ़कर अपना मुँह संगीता के मुँह से मिलाया और दोनों मित्र बन गयीं।

घर पहुँचकर संगीता ने एक विशेष प्रकार की ध्वनि की। तब उसकी सारी सेना और परिवार के लोग इकट्ठे हो गये। संगीता ने उन सभी से अपनी नई सहेली का परिचय कराया। सभी रानी से मिलकर बड़े ही खुश हुए।

अब रानी और संगीता साथ-साथ रहने लगीं । वे साथ-साथ काम करती थीं और साथ-साथ ही घूमती थीं। रानी ने संगीता को नई-नई चीजें सिखायी थीं, जैसे कि तरीके से घर बनाना, बच्चों को अच्छी तरह पालना आदि । इन सभी के कारण संगीता और उसकी सेना की सारी चींटियाँ, रानी को बड़े सम्मान के साथ देखती थीं। संगीता अपनी सेवक चींटियों से कहती थी- 'जो जितना गुणवान होता है, उसका उतना ही आदर होता है । अगर तुम दूसरों से सम्मान चाहती हो तो गुणी बनो।' वह हमेशा उदाहरण के रूप में रानी का नाम लिया करती थी।

एक दिन की बात है कि संगीता और रानी अपनी कुछ सहेलियों के साथ घूमने निकलीं। रास्ते भर वे बड़ी प्रसन्नता से गीत गाती गयीं। जगह-जगह ठहरकर तरह-तरह का नाश्ता भी करती गयीं। घूमते-घूमते सभी तालाब के किनारे पहुँचीं । वहाँ एक संजीव नाम का सारस रहा करता था। वह संगीता का मित्र था, उसने संगीता को एक कमल का फूल उपहार में दिया। संगीता ने संजीव सारस को इसके लिये धन्यवाद दिया। संजीव वापस लौट गया। तब संगीता तालाब के किनारे अपनी सहेलियों के साथ बैठकर उस कमल के फूल का पराग खाने लगी । सबने खूब छककर उसकी दावत उड़ायी । इसके बाद वे सारी की सारी चींटियाँ पानी पीने तालाब के किनारे उतरीं। और तो सब पानी पीकर ठीक से आ गयीं। परन्तु संगीता का पैर फिसल गया। वह पानी में गिर पड़ी। संगीता चीखने लगी- 'बचाओ-बचाओ।'

संगीता की पुकार सुनकर सारी की सारी चींटियाँ तालाब के किनारे पर आ गयीं। सभी खड़ी-खड़ी यही सोचती रहीं कि क्या करें, कैसे इसको बचायें ? नींतू चींटी बोली- 'चलो कहीं से बड़ा-सा तिनका लायें।' हंसू बोली- 'कहीं से पत्ता खींच लायें।'

सभी चींटियाँ आपस में बात कर ही रही थीं कि रानी अपनी जान की परवाह किये बिना पानी में कूद पड़ी। वह एक पत्ते के टुकड़े पर कूदी थी। पूरी बहादुरी से उस पत्ते को धकेलती हुई रानी संगीता के पास ले गयी। फिर अपना हाथ बढ़ाकर तुरन्त उसने संगीता को पत्ते पर खींच लिया, फिर पत्ते को खींचती हुई रानी तालाब के किनारे आ गयी।

तालाब के किनारे खड़ी सभी चींटियाँ रानी का साहस देखकर हैरान थीं । वे अभी सोच ही रही थीं कि रानी अपनी जान की परवाह न करके संगीता को बचा लाई थी। सभी चीटियों ने मिलकर उस पत्ते को किनारे पर खींच लिया , जिस पर रानी और संगीता बैठी हुई थीं। थोड़ी देर बाद संगीता पूरी तरह ठीक हो गयी।

रानी का उपकार देखकर संगीता की आँखों में पानी भर आया था। वह रानी के गले से लिपटते हुए बोली- 'बहिन ! आज तुमने स्वयं को खतरे में झोंककर भी मेरे प्राणों की रक्षा की है। यदि मुझे पानी में तनिक भी देरी हो जाती तो मेरा मरा हुआ शरीर ही शेष रहता।'

अब संगीता की समझ में आ गया था कि वास्तव में उसकी सच्ची मित्र कौन है। सारी सहेलियों के रहते हुए भी संगीता के आज निश्चित ही प्राण चले जाते, यदि रानी न होती। उस दिन से उसके मन में रानी के प्रति आदर-सम्मान की भावना और अधिक बढ़ गयी है। अब संगीता की सहेलियों की समझ में भी यह बात आ गयी कि मित्र के मुसीबत में पड़ने पर अपने प्राणों की परवाह न करके उसकी रक्षा करनी चाहिये।

**पहेली का उत्तर: तरबूज़**

# कहानी
# द्वितीय दिवस

*असंवाधं मध्यतो यानवानाम् ।*

*- यजु० ३०*

*मनुष्य आपस में लड़ाई झगड़ा न करें । प्रेमभाव ही मनुष्य के सुदृढ़ संबंधों का आधार है ।*

**पहेली ?**

सुबह-सुबह मैं आता हूँ , दुनिया की खबर सुनाता हूँ , बिना मिले सब उदास हो जाते , मैं क्या कहलाता हूँ ?

## दो सहेलियाँ

खाली दिमाग शैतान का घर होता है । जो काम में नहीं लगा रहता उसे शरारत ही सूझा करती है । बगुले ने सोचा कि किसी भी प्रकार से बतख और मुर्गी में फूट डलवाई जाए ।

एक दिन बगुला पकवान लेकर बतख के यहाँ पहुँचा और बोला-'बहन! आज मेरा जन्मदिन है, तुम्हारे लिए कुछ मिठाई लाया हूँ ।'

बतख ने मिठाई लेने से बहुत मना किया, पर बगुले ने एक न सुनी । वह टोकरी रखकर ही वापस आ गया ।

कुछ दिन बाद बगुला आमों की टोकरी लेकर मुर्गी के यहाँ पहुँचा । वह कहने लगा-'दीदी! ये बड़े मीठे-मीठे आम मेरे ही बगीचे में लगे हैं, लो तुम चखकर देखो ।'

मुर्गी ने आम रखने से बड़ा मना किया पर बगुला नहीं माना । कहने लगा कि मेरे यहाँ तो बहुत रखे हैं। यहाँ सड़कर खराब ही हो जाएँगे। बहुत आग्रह करने पर मुर्गी ने उन आमों को लौटाना भी उचित नहीं समझा ।

फिर इसी प्रकार किसी न किसी बहाने से बगुला कभी मुर्गी के घर और कभी बतख के घर जाने लगा। धीरे-धीरे उसने एक रवैया अपनाया । जब मुर्गी के घर जाता तो बतख की बुराई करता । बतख के घर जाता तो मुर्गी की । इस प्रकार उसने एक दूसरे के विरुद्ध दोनों के खूब कान भरे ।

मुर्गी और बतख के दिल भी अब पहले जैसे साफ नहीं रहे। उनमें धीरे-धीरे मनमुटाव होता जा रहा था। दोनों बात-बात पर चख चख करने लगती थीं ।

एक दिन तो हद हो गई। किसी छोटी सी बात पर बतख इतनी नाराज हुई कि उसने मुर्गी के पंख नोंच लिए । मुर्गी ने भी अपनी लाल-लाल आँखें निकालकर अपनी चोंच बतख की पीठ में गड़ा दी ।

नदी में एक पैर से मछलियों पर घात लगाए खड़े बगुला को यह देखकर मजा आ रहा था। वह जल्दी से किनारे पर आया। आँखें मटकाकर गरदन नचाकर बगुला बोला-'अरे! तुम दोनों ही एक से बढ़कर एक शक्तिशाली हो। देखें तो तुम दोनों में से आज कौन जीतता है ?'

बगुले की बातों से दोनों उत्तेजित हो उठीं। बतख ने चोंच दबाकर जोर से मुर्गी की पूँछ खींची। मुर्गी ने भी गुस्से में भरकर कहा- ' आ तो सही आज तुझे मारकर ही दम लूँगी।''

दोनों एक दूसरे को तेजी से चोंच और पंजों से नोंचने - खरोंचने पर जुटी हुई थीं। तभी उधर से एक हंस आया। बतख और मुर्गी का यह विकट युद्ध देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह बोला- 'बहनो ! यह लड़ाई क्यों हो रही है ? क्या किसी प्रतियोगिता के लिए अभ्यास कर रही हो।'

'नहीं! आज हम दोनों में से केवल एक ही जिंदा रहेगा। मुर्गी मुँह मोड़कर कहने लगी।'

हंस ने बीच-बचाव करके बड़ी ही मुश्किल से उनकी लड़ाई बंद कराई, पर फिर भी दोनों मुँह से बोल-बोलकर लड़ने लगीं। 'हूँ ! मैं तेरी कमाई खाती हूँ न ?' बतख कुछ बक-बक करके बोली। तो जैसे हाथ पर हाथ रखकर सारे दिन निकम्मी ही बैठी रहती हूँ।' मुर्गी कड़ककर बोली।

'किसने कहा तुमसे यह ?' बतख ने प्रश्न किया।
'बगुले ने कहा था।' मुर्गी बोली। 'अरे बगुले ने ही मुझसे यह कहा था कि मुर्गी दीदी कह रही थीं कि मैं उनकी कमाई खाती हूँ।' बतख बोली।

हंस की समझ में सारी बात आ गई थी। धीरे-धीरे यह बात खुली कि बगुले ने ही मुर्गी और बतख दोनों को एक दूसरे के विरुद्ध भड़काया था।

हंस कहने लगा- 'तुमने एक धूर्त की बातों पर विश्वास करने का क्या परिणाम भुगता है। तुमने बिना सोचे-समझे बगुले की बातों पर विश्वास किया। अच्छा होता यदि दोनों आपस में ही बात को कह सुन लेतीं। तब न तो एकदूसरे के प्रति अविश्वास होता, न यह लड़ाई-झगड़े की नौबत आती।

मुर्गी और बतख दोनों ही बड़ी लज्जित हुईं। बतख को गले लगाते हुए मुर्गी बोली- 'बहन ! यदि आज हंस दादा न आते तो न जाने क्या होता ?'

'हाँ ! हम दोनों की मित्रता पर खूब जग हँसाई होती। किसी की बातों पर बिना सोचे-विचारे कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। धूर्त व्यक्ति तो अपना मतलब साधने की ताक में सदा रहते ही हैं।' बतख कहने लगी। 'चलो चलें।' बतख ने चलने को अपनी गरदन उठाई। दोनों ने मिलकर नदी के किनारे हर जगह बगुले को छान मारा, पर वह तो डरकर पहले ही भाग गया था। फिर कभी वापस लौटकर नहीं आया। अब तो मुर्गी और बतख पहले से भी ज्यादा पक्की सहेली बनकर रहती हैं।

**पहेली का उत्तर : अखबार**

# कहानी
# तृतीय दिवस

*मित्रस्याऽहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि ।*

*- यजु० ३६। १८*

*सब प्राणियों को मित्रता की दृष्टि से देखो । प्राणी से नहीं, उसके दुष्कर्मों से शत्रुता करो ।*

**पहेली ?**
**मैं एक फूल भी हूँ, फल भी हूँ और मिठाई भी हूँ, मेरा नाम क्या है ?**

## मित्रता की कला

केशू कछुआ एक दिन उदास सा नदी के किनारे बालू पर लेटा था। वह समझ नहीं पा रहा था कि कैसे रहे ? सुबह से शाम तक अकेले रहना, न कोई साथ को और न कोई बात करने को ।

तभी केशू ने देखा कि नदी के किनारे एक हिरण आकर बैठा है । चलो इसी से बात करता हूँ। केशू ने मन ही मन सोचा ।

तब तक हिरण बोल पड़ा- "नमस्ते दादा ! उदास से कैसे लेटे हो ?"

"नमस्ते भाई ! कुछ नहीं, ऐसे ही जरा सो रहा था ।" केशु बोला । हिरण ने बताया कि उसका नाम सुंदर है। वह पास के जंगल में रहता है। आज घूमते-घूमते इधर आ गया हूँ ।

जल्दी ही सुंदर और केशू पक्के मित्र बन गए। दोनों नदी किनारे बैठकर घंटों बात करते रहते। नदी के और कछुओं को उन दोनों की मित्रता देखकर बड़ा अचंभा होता। जरूर इसमें केशू का कुछ स्वार्थ होगा। फिर वे सोचने लगते ।

एक दिन केशू ने अपने मित्र सुंदर के सामने यह समस्या रखी कि वह सारी नदी में बदनाम है और उसका कोई साथी नहीं है। सुंदर ने बड़े ध्यान से उसकी बात सुनी। फिर बोला - "दोस्त ! बदनामी तो बड़ी जल्दी हो जाती है, उसे हटाने के लिए तुम्हें बड़ा प्रयास करना पड़ेगा। तुम सदैव अच्छे कार्य करो। दूसरों की सहायता करो उनसे अच्छा व्यवहार करो। तुम्हारी अच्छाई एक न एक दिन बदनामी को हटा देगी ।"

"ठीक है! मैं पूरी कोशिश करूँगा।" केशू ने लंबी सांस भरते हुए कहा । उसे दुःख हो रहा था कि यदि उसने पहले ही ऐसा किया होता तो आज उसके भी ढेर सारे मित्र होते। सभी उसकी प्रशंसा करते ।

उस दिन से ही केशू अपने स्वभाव को पूरी तरह से बदलने में जुट गया ।

बंदर के बच्चे ने केशू कछुए को धन्यवाद देते हुए कहा- ओह दादा! आज तुम न आते तो मैं डूब ही जाता।"

नदी किनारे बैठे बंदरों ने देखा कि एक बंदर का बच्चा केशू कछुए की पीठ पर बैठा है। वे आपस में कहने लगे- "यह केशू कछुआ तो बड़ा ही दुष्ट है। यह इस बच्चे को मार डालेगा। आज तो इसकी जान गई ही समझो।" पर उन सभी के आश्चर्य की सीमा न रही जब उन्होंने देखा कि केशू बच्चे को लेकर किनारे की ओर ही बढ़ा चला आ रहा है।

"आज केशू काका के कारण ही मेरे प्राण बचे हैं। नहीं तो मैं कबका नदी में डूब गया होता।" किनारे पर आकर केशू की पीठ से उतरता हुआ बंदर का बच्चा बोला।

सभी बंदरों ने केशू को बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। एक बूढ़ा बंदर बोला- "तुम कितने उपकारी हो केशू? तुम्हारे पड़ोसी कछुवे वैसे ही तुम्हारी बुराई करते हैं। हो सकता है कि वे तुमसे कोई बैर भाव रखते हों।"

""नहीं-नहीं! अब वे मेरी बुराई नहीं करेंगे। अब मैं बदल गया हूँ। " केशू ने उत्तर दिया।

सभी बंदरों ने बच्चा बचाने की खुशी में केशू को बढ़िया सी दावत दी। उसे खूब सारे उपहार देकर विदा किया और कहने लगे- "केशू हम सभी तुम्हारे मित्र हैं। । तुम हमारे पास प्रतिदिन आया करो। कभी किसी काम की जरूरत हो तो हमसे कहना।"

केशू आज बड़ा प्रसन्न था। दूसरों का उपकार करने में जिस सच्ची प्रसन्नता का अनुभव होता है, उसे आज उसने प्राप्त कर लिया था।

केशू ने बंदर के बच्चे की जान बचाई है - यह खबर उसके पड़ोसी कछुओं तक भी पहुँच गई थी। वे कई दिनों से देख रहे थे कि केशू का व्यवहार अब विनम्र होता जा रहा है। इस समाचार से उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। वे आपस में कहने लगे- "केशू अब पहले जैसा नहीं रहा। वह बहुत अच्छा बन गया है। "

केशू के आने पर सभी कछुओं ने उसका स्वागत किया। सभी ने कहा कि तुमने आज बड़ा अच्छा काम किया है।

केशू ने बंदरों से मिले उपहार सभी कछुओं को बाँट दिए।

अब कछुओं के मन में केशू के प्रति पहले जैसा भाव नहीं रहा था। वे सभी उसके साथ बात करते थे, मिल-जुलकर रहते थे। केशू के बहुत सारे मित्र बन गए। सभी उसकी प्रशंसा करते।

अब केशू बिलकुल भी सुस्त और अकेला नहीं रहता है। कभी कछुए, कभी बंदर, कोई न कोई उसके पास बैठा ही रहता है। केशू को बहुत अच्छा लगता है। मित्र कैसे बनते हैं? जीवन कैसे जीना चाहिए? यह बात उसकी समझ में आ गई है।

माँ अपने बच्चे से – बताओ हमने इस कहानी से क्या सीखा ?

( बच्चे को बताने का मौका देते हुए उसकी आधी अधूरी बात को पूरी करने में मदद करें। )

**पहेली का उत्तर : गुलाबजामुन**

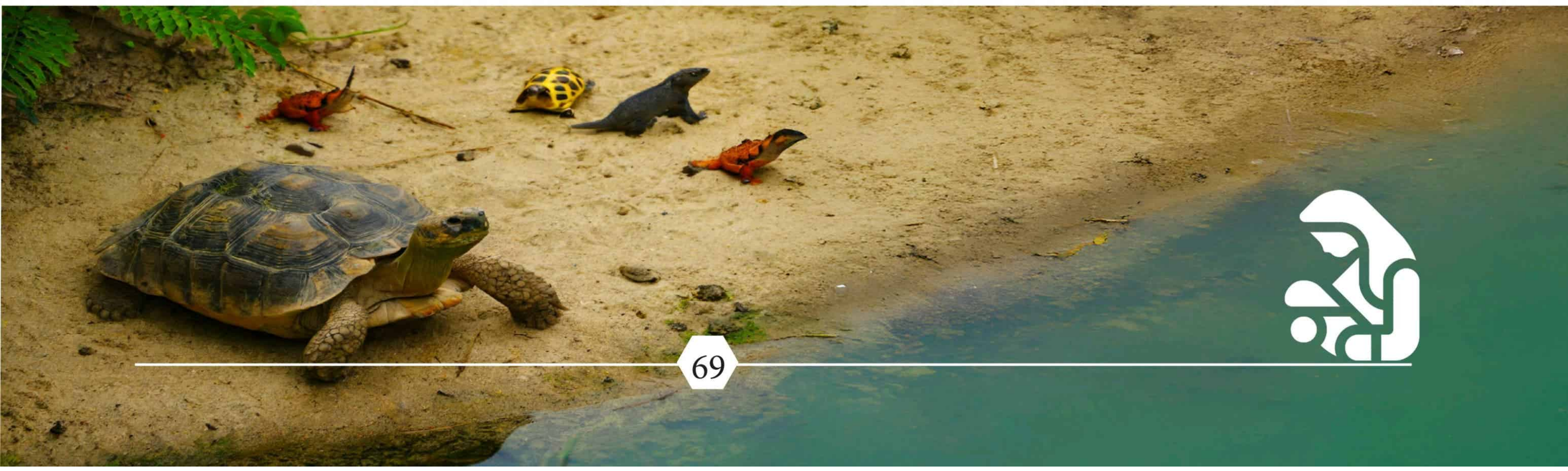

# कहानी
# चतुर्थ दिवस

*सखा सखिभ्यो वरीयः कृणोतु ।*

*- अथर्व० ७।५१।१*

*मित्र वह है जो मित्र की भलाई करे । कुमार्ग से बचाना सबसे बड़ी नेकी है ।*

**पहेली ?**
साल के किस महीने में 28 दिन होते हैं ?

## तीन मित्र

काली कौवा आज बड़ा उदास था। किसी काम में उसका मन नहीं लग रहा था। कभी वह इस पेड़ पर बैठता तो कभी उस पेड़ पर। काँव-काँव करता हुआ बेचैन सा घूम रहा था।

'आओ! घूमने चलें।'' गिद्ध ने कहा।

'नहीं काका अभी नहीं जाऊँगा।'' कहकर काली कौवा फिर उदास सा बैठ गया। असल में वह अपने मित्र सुंदर हिरण का इंतजार कर रहा था। दो घंटे हो गए, पर सुंदर नहीं आया। काली कौवा घबराहट से भर उठा। कहीं ऐसा तो नहीं कि सुंदर हिरण किसी शिकारी के चंगुल में फँस गया हो ? हिरणों के पीछे शिकारी पड़े ही रहते हैं। जंगल के जानवर और पशु-पक्षियों का जीवन उनके कारण बड़े खतरे में रहता है। तभी काली कौवे ने देखा कि सामने से सुंदर हिरण चला आ रहा है।

"नमस्ते! कौवे भाई।" सुंदर बोला। काली ने मुँह फिरा लिया, उसे बड़ा गुस्सा आ रहा था।

'क्या बात है, आज तुम कुछ बोल क्यों नहीं रहे हो ? '' सुंदर हिरण ने फिर पूछा। काली अब भी कुछ न बोला।

"लो मैं तुम्हारे लिए तो इतनी दूर से दौड़ता-हाँफता चला आरहा हूँ। रास्ते में कहीं रुका तक नहीं। मेरी साँस फूल रही है और एक तुम हो कि मुँह फुलाए बैठे हो।" अब सुंदर को भी बहुत गुस्सा आने लगा था।

'तो क्यों आए थे तुम ? न आते। आने की जल्दी ही क्या थी ?'' काली ने कहा।

"मुझे क्या पता था कि तुम बोलोगे तक नहीं। नहीं तो मैं न आता।" सुंदर कहने लगा।

"सुबह से तो आँख फाड़-फाड़कर तुम्हारा इंतजार कर रहा हूँ। कहाँ चले गए थे तुम ? इतनी देर क्यों लगा ली ?" काली का गुस्सा अभी भी कम नहीं हुआ था।

'आज मुझे अपनी पत्नी के साथ जबरदस्ती घूमने जाना पड़ा। घूमते-घूमते बहुत दूर निकल गए। वहाँ से लौटने पर सीधा तुम्हारे ही पास दौड़ता-दौड़ता आ रहा हूँ।" सुंदर बोला।

'ओह! तो जाओ पत्नी के साथ ही घूमो। दोस्त की तुम्हें चिंता भी क्या है ? " काली बड़े गुस्से में बोला और मुँह फिराकर बैठ गया।

'अब सुंदर को भी गुस्सा आ गया। ठीक है, नहीं बोलना तो मत बोलो, मैं चला।" उसने कहा और पास की झाड़ी में मुँह लटकाकर बैठ गया।

सुंदर बहुत थका था। बैठते ही उसे नींद आ गई। जब उसकी आँख खुली तब उसने अपने गले में रस्सी का फंदा पड़ा पाया। एकाएक वह समझ नहीं पाया कि यह क्या हुआ ? तभी उसकी निगाह झाड़ी के पास खड़े शिकारी पर गई। अब सुंदर की समझ में आ गया कि वह शिकारी की गिरफ्त में फँस चुका है।

शिकारी अपने हाथ में रस्सी की डोर थामे बढ़ रहा था। उसके पीछे-पीछे उदास सुंदर मुँह लटकाए चला जा रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे ?

तभी काली कौवे ने पेड़ पर बैठे हुए यह दृश्य देखा। वह तुरंत उड़ता हुआ सुंदर के पास जा पहुँचा। सुंदर सोच रहा था कि वह काली से कुछ देर पहले बड़े कडुवे ढंग से बातें करके आया है, इसीलिए काली उससे नहीं बोलेगा, पर यह उसका भ्रम ही निकला। काली काँव-काँव करता हुआ कह रहा था - घबराना नहीं मित्र ! मैं तुम्हें छुड़ाने का कोई उपाय सोचता हूँ।

काली तुरंत उड़ता हुआ भासुर हिरण के पास गया। भासुर ने पूरी कथा सुनकर कहा- "पर काली! मैं सुंदर की सहायता कैसे कर सकता हूँ ? काली ने उसे बड़ा अच्छा उपाय सुझाया। उसे सुनकर भासुर बड़ा ही प्रसन्न हुआ। दोनों सुंदर को छुड़ाने के लिए चल पड़े।"

काली आगे-आगे चलकर रास्ता दिखा रहा था। दोनों ने देखा कि शिकारी धीरे-धीरे चल रहा है। भासुर हिरण रास्ते में साँस रोककर लेट गया, शिकारी की निगाह भासुर पर पड़ी। अरे आज तो खूब शिकार मिल रहे हैं। आज तो बड़ा ही शुभ दिन है। वह खुशी से चिल्लाया।

जिस रस्सी में सुंदर हिरण बँधा था, उसी के दूसरे सिरे से उसने भासुर को बाँधना चाहा। पर तभी एकाएक भासुर छलांग लगाकर भाग गया। शिकारी चौंक उठा, उसके हाथ से रस्सी का सिरा छूटने लगा। तभी काली कौवे ने जाकर तेजी से उसकी नाक पर अपनी चोंच मारी। शिकारी की नाक से खून निकलने लगा। वह दरद के कारण कराह उठा। उससे हाथ से रस्सी छूट गई। सुंदर हिरण रस्सी सहित तेजी से जंगल में भाग गया।

यह देखकर शिकारी विलाप करने लगा-"अरे! मैंने जरा से लोभ के कारण हिरण भी खो दिया और रस्सी भी। न मैं दूसरे हिरण के लालच में पड़ता और न ऐसा होता। सच ही है कि लालची का हमेशा नुकसान ही होता था। लोभ के कारण हानि उठानी पड़ती है।"

सुंदर और भासुर हिरण तथा काली कौवा जब खूब दूर पहुँच गए तो एक पेड़ के नीचे जाकर बैठे। सुंदर कहने लगा- "मैंने तो सोचा था कि काली तुम मुझसे बोलोगे भी नहीं, क्योंकि मैंने कटु वचन बोले थे। "

काली कहने लगा, पर तुम संकट में थे। विपत्ति में बैर-भाव भुलाकर मित्र की सहायता करनी चाहिए। जो मित्र की जरा सी बात का बुरा मान जाते है, आपत्ति पड़ने पर मुँह फिरा लेते हैं, वे सच्चे मित्र नहीं होते। वे तो मात्र केवल मित्रता का ढोंग रचते हैं।

भासुर बोला- "जीवन में सच्चे मित्र बड़ी कठिनाई से मिलते हैं। जो सच्चे मित्र पा लेता है, वह बड़ा भाग्यवान होता है। उसे विपत्तियाँ भी विपत्ति जैसी नहीं लगा करतीं। सुख-दुःख दोनों ही स्थितियों में उसके मित्र भागीदार होते हैं।"

"हमारी मित्रता ऐसी ही पक्की हो।" कहकर तीनों ने हाथ मिलाया। फिर सभी प्रसन्न मन से अपने-अपने घर लौट गए।

**पहेली का उत्तर :**
**साल के सभी महीनों में न्यूनतम 28 दिन होते हैं।**

# बच्चों की समस्याओं के मनोवैज्ञानिक तथा व्यावहारिक समाधान

## बच्चों के मित्र बनें

अपने बच्चों के अच्छे मित्र बनिये मित्र इस माने में कि उनके साथ प्रसन्न रहिये, उनकी अभिरुचि से साम्य रखिए , सहायता कीजिये और उनको अहित से बचाइये। बच्चों के साथ व्यवहार करने में इन मुख्य चार बातों का ध्यान रखने का मतलब है कि आप उनके साथ एक सच्चे मित्र का कर्तव्य निभाते हैं। जो अभिभावक अपने इस कर्त्तव्य के प्रति जागरूक रहते हैं, वे मानो अपने बच्चों का ठीक-ठीक पालन पोषण करते हैं, और जो इसकी उपेक्षा करते हैं, वे मानो बच्चे को समय की स्वतन्त्र लहरों पर छोड़ देते हैं कि वे जिस किनारे चाहें उन्हें ले जाकर लगा दें। समय के सिर छोड़े हुये बच्चों का विकास जंगली झाड़ियों की तरह होता है। जिन में फूल कम और कांटे अधिक होते हैं, उसमें भी अधिकतर निर्गन्ध और गन्ध वाले फूल भी निरर्थक निरुपयोगी रह जाते हैं। इसके विपरीत जिन बच्चों का पालन, पालन के रूप में किया जाता है वे एक चतुर माली के व्यवस्थित उद्यान की भांति सुन्दर और सुगन्धित होते हैं।

कुछ अभिभावक स्वभाव से बड़े सख्त और प्रभावशाली होते हैं। उनके आते ही घर में एक कोने से दूसरे कोने तक सन्नाटा छा जाता है। बच्चे जहां के तहां सहम कर ठिठक जाते हैं। सब खामोश हो जाते हैं। अगर बात भी करते हैं तो बहुत धीरे जैसे कोई अपराध कर रहे हों। सब एक दूसरे की ओर आश्रय की दृष्टि से देखने लगते हैं। सारे काम निर्जीव यन्त्र की तरह होने लगते हैं। घर के पूरे वातावरण में एक निरुल्लास परिवर्तन आ जाता है।

मानने को तो इसे अनुशासन माना जा सकता है किन्तु इस प्रकार का नियन्त्रण होता है कुछ आतंक की जाति बिरादरी का। इसमें अदब से अधिक भय का अंश रहता है और भय की अनुभूति न किसी को पसन्द होती है और न उससे कुछ बनता है। गृह-स्वामी के आने से जो एक प्रसन्नता पूर्ण कृतज्ञता परिवार में फैलनी चाहिए उसके स्थान पर सारे सदस्य एक प्रकार की परेशानी अनुभव करने लगते हैं। बच्चों को खास तौर से अपने मन में मस्तिष्क पर दबाव पड़ता मालूम होता है जिससे वे बड़े अस्त-व्यस्त हो जाते हैं।

होना तो यह चाहिये कि पिता के आते ही सारे बच्चे पुलकित होकर पिताजी! पिताजी! पिताजी! कहते हुए चारों ओर से घेर लें और अपनी अपनी कहने सुनने लगें और पिताजी अच्छा, ''हां'' ''यह बातें'' कहते हुए हंसते मुस्काते बच्चों से घिरे कमरे में पहुंचे किन्तु होता है इसके विपरीत। उनके प्रवेश की आहट पाते ही खेलते और हंसते हुए बच्चे सहसा चुप होकर कतराने लगते हैं। उनके अर्धचेतन में कुछ इस प्रकार की प्रतिक्रिया झलक मार जाती है अच्छा होता पिताजी अभी थोड़ी देर न आये होते। उनके देर से आने में जल्दी आ जाने का आभास अनुभव होता है। यह अनुभूतियां श्रेयस्कर नहीं। इससे स्वाभाविक स्नेहिल प्रवृत्तियों का ह्रास हो जाता है।

कुछ अभिभावक बाहर की खीझ घर उतारा करते हैं। मानिये, उन्हें दफ्तर अथवा व्यावसायिक स्थान पर कुछ ऐसी स्थिति को सहन करना पड़ा है जिससे उनके मन में एक क्षोभ पैदा हो गया है। उन्हें कोई गलत बात सुनकर सहन करनी पड़ी है अथवा कुछ नुकसान उठाना पड़ा है, जिससे उन्हें एक मानसिक व्यग्रता है। यह ठीक है कि इस स्थिति में कुछ अच्छा नहीं लगता, फिर भी इसका यह मतलब कदापि नहीं है कि उसका बदला घर आकर बच्चों से लिया जाये, उन्हें बोलते या पास आते ही झिड़का और डाटा जाये। क्षोभ का स्थान घर नहीं है, न बच्चे इसके दोषी हैं। बाहर का वातावरण बाहर और घर का वातावरण घर बनाये रखना व्यवहार कुशलता है।

इनको एक दूसरे से बदलना या इनका सम्मिश्रण कर देना अनुचित है। इससे परिस्थिति संभलती नहीं और बिगड़ जाती है। इसीलिये देश काल का विचार रखने की रीति पर जोर दिया गया है। अपने भावावेगों पर इतना नियन्त्रण अवश्य रखना चाहिये कि वे अयुक्त देशकाल में न प्रकट होने पायें।

बच्चों से ऐसा व्यवहार किया जाना चाहिये कि वे आपके आने पर प्रसन्न हो उठें और आने के समय आपकी प्रतीक्षा करें। जब वे अपनी अपनी बातें, शिकायतें और मुकदमे आदि आपके सामने रखें तो उनकी सुनिये और चतुरता से उनका निराकरण करिये। उनके हंसने बोलने में हिस्सा लीजिए बात करिये, कुछ प्रसन्न होइये और उनको प्रसन्न कीजिये। जिससे आपकी उपस्थिति से घर का वातावरण आतंक पूर्ण न होकर प्रसन्नतापूर्ण ही रहे।

अनेक अभिभावक बच्चों की रुचि को कोई महत्व ही नहीं देते, सदैव ही उनकी रुचि पर अपनी रुचि स्थापित किये रहते हैं। उनकी छोटी से छोटी रुचि अपना संशोधन किये बिना नहीं मानते। वे अपने इस विश्वास के वशीभूत रहते हैं कि बच्चा तो अक्ल का कच्चा होता ही है उसकी पसन्द हर हालत में गलत होगी इसलिये उसमें उनका संशोधन आवश्यक है। यद्यपि उस संशोधन में एक आदत के सिवाय कोई गम्भीरता नहीं होती तथापि वैसा करेंगे अवश्य।

इस प्रकार अन्य बड़ी-बड़ी चीजों और पसन्दगी की बात तो क्या वे ऐसी जरा-जरा सी चीजों में भी संशोधन किये बिना नहीं मानते और उनके इस संशोधन में कोई स्थायी दृष्टिकोण नहीं रहता। उसके कहने से कभी ठीक बताई हुई चीज खराब और खराब बताई हुई चीज अच्छी बतला देंगे। जिससे वह कभी भी यह नहीं जान पाता कि कौन सी चीज ठीक है और कौन-सी खराब। इससे किसी चीज का चुनाव करने में उसे उलझन होने लगती है। वह हर चीज खराब समझने लगता है। कुछ निर्णय करने में उसे आत्म-विश्वास नहीं रहता।

हर अभिभावक को बच्चों पर कुछ करना ही होता है। उनके लिये चीजें खरीदनी होती हैं, उनकी, आवश्यक मांग की पूर्ति करनी होती है। इसके लिये अभिभावक अधिकतर करते यह हैं कि वे बहुत दिन तक बच्चों की मांगों और आवश्यकताओं को सुनते रहते हैं और फिर एक दिन सारी चीज लाकर ढेर लगा देते हैं। इस प्रकार एक दिन बाद उनकी इच्छायें और रुचियां जाग्रत होने लगती हैं और तब वे आवश्यक न होने पर नई चीजें चाहने लगते हैं, जो ठीक नहीं होता। अभिभावकों को चाहिये कि वे बच्चों की मांग पूरी करने के कार्यक्रम को इस प्रकार विभाजित करें कि उनका हर्ज भी न हो और प्रतिदिन या दूसरे तीसरे एक न एक नई चीज घर में आती रहे। इस प्रकार बच्चों को प्रति-दिन प्रसन्न और खुश होने का अवसर रहता है और घर का वातावरण प्रफुल्लित रहा करता है जो पारिवारिक जीवन के लिये बहुत शुभ है। जिन परिवारों में प्रसन्नता और प्रफुल्लता रहती है वे परिवार धनवान् न होते हुये भी सम्पन्न दिखाई देते हैं।

अभिभावकों को यथा सम्भव बच्चों की रुचि की रक्षा करनी चाहिये। उनकी रुचि पर अपनी रुचि को आदतन हठ पूर्वक नहीं थोपना चाहिये। इससे पैसा खर्च करने पर भी बच्चे को सन्तोष नहीं होता। बच्चों की रुचि और प्रौढ़ों की रुचि में बहुत अन्तर होता है। चूंकि बच्चे की अपेक्षा अभिभावकों का उत्तरदायित्व अधिक होता है, इसलिए उन्हें बुद्धिमत्ता पूर्वक बच्चों की रुचि से अपनी रुचि का साम्य स्थापित करना चाहिए। जिन बातों में वे समझें कि बच्चे की रुचि ठीक नहीं रहेगी या तो उसमें उनकी रुचि को अवसर ही न दीजिये या उसे ठीक ठीक पता रहे कि पापा सही कहते हैं। इससे उसमें यह भाव ना आने पायेगा कि छोटा होने के कारण उसकी बात नहीं मानी जाती है। अभिभावक के संशोधन में उपयोगिता, लाभ अथवा हित का समावेश अवश्य होना चाहिये। यों ही अकारण संशोधन ठीक नहीं, क्योंकि इस प्रकार की आदत स्वयं एक बचपना है जो अभिभावक को शोभा नहीं देता।

बहुत बार बच्चों की बहुत सी ऐसी उलझनें हो जाती हैं जो उनके सुलझाये नहीं सुलझतीं। जैसे उनका किन्हीं दो वस्तुओं में से एक के लिये ही भाई-बहनों का उलझना। साथियों से झगड़ा हो जाना, हर काम बिगड़ जाना, पाठ और प्रश्न समझ में न आना, अध्यापक व अन्य गुरुजनों की नाराजगी दूर करना कोई आशंका अथवा भय दूर करना।

ऐसी उलझनें आ जाने पर यह कह कर निराश नहीं छोड़ देना चाहिये कि तुम्हारा मामला है, तुम समझो या तुमने खुद जैसा किया उसको भरो। अपितु उनकी उलझन को ध्यान पूर्वक सुनिये और उसको पूरी तरह समझ कर और उसे समझा कर दूर करने में उसकी सहायता कीजिये। अपनी पुस्तकें, चीजें और कपड़े लत्ते आदि रखने, उठाने धरने और पहनने आदि में उनकी इस प्रकार सहायता कीजिये कि वे उनमें

एक व्यवस्था की शिक्षा पा सकें। बच्चों को कपड़े लत्ते पहनने, पेटी लगाने, नाड़ा बांधने, पतलून पहनने, बूट बांधने उतारने और खोलने में उनकी तब तक मदद कीजिये जब तक वे कायदे के साथ ठीक ठीक पहन ओढ़ और बांध खोल न पायें। क्योंकि यदि उन्हें शुरू में इसका ठीक ठीक अभ्यास नहीं हो जाता तो उनकी वह आदत जीवन भर नहीं जाती और परेशानी होती है। गलत गांठ लगाने और खोलने से कमरबन्द में फन्दा पड़ जाना, बनियान का सर में उलझ जाना, उल्टी कमीज उतारना, गलत कोट पहनना, बटन टूट जाना, पेटी उतर जाना आदि रोजमर्रा की बात हो जाती है। इससे उन्हें सदैव परेशानी भी होती है और देखने वाले उन्हें बेवकूफ और बेसऊर समझते हैं। इस प्रकार प्रति-दिन की साधारण से साधारण बातों में उनकी तब तक अवश्य मदद की जानी चाहिये, जब तक वे ठीक से इसके अभ्यस्त न हो जायें। यह छोटी-छोटी उलझनें कभी-कभी बड़े-बड़े हर्ज और हानियों की कारण बन जाती हैं।

बहुत से अभिभावक कभी खेल में या किसी शरारत में यों ही अकस्मात चोट लग जाने पर उनकी कोई मदद के बजाय उल्टा उन्हें डांटते-फटकारते और मारने लगते हैं। यह ठीक नहीं। पहली गलती तो उसने की उस पर उल्टा उसे यह कहकर तुमने चोट लगाई है जाकर खुद ठीक करो, एक दूसरी गलती होगी। इससे वह अपने को निःसहाय समझ कर बड़ा निराश हो जाता है। अपना उपचार करने के लिये कोई गलत चीज लगाकर तकलीफ बढ़ा लेना और फिर बढ़ी हुई तकलीफ दूर कराने के लिये आखिर अभिभावक को ही उपचार करना होता है। इससे पहले उसकी मदद करनी चाहिये और तब उससे चोट का कारण पूछकर गलती पर डांटना चाहिये। अन्य भी ऐसी बहुत सी बातें हो सकती हैं जिसमें बच्चे को अभिभावक की सहायता की अपेक्षा होती है। ऐसे अवसर पर उसकी मदद अवश्य करनी चाहिये।

बहुत से अभिभावक बच्चे पर नाराज होकर अथवा प्रेमवश या अपनी उपेक्षा और प्रमादवश बच्चों को यह कहकर गलत काम करने या गलत आदत डालने से नहीं रोकते कि जैसा करेगा आप भरेगा, मैं बिना वजह सर क्यों खपाऊं? यह स्वभाव ठीक नहीं। बच्चे क्या करते हैं, क्या सीखते हैं? कहां उठते बैठते हैं अथवा किस प्रकार के बनने जाते हैं। इस पर एक गहरी दृष्टि रखना प्रत्येक अभिभावक का परम कर्त्तव्य है। उनसे ऊब कर या झल्ला कर उन्हें जो चाहें करने और जैसे चाहें बनने के लिये नहीं छोड़ देना चाहिये। सावधानी पूर्वक तब तक उनके पीछे लगे रहना चाहिये जब तक ये ठीक रास्ते पर न आ जायें। इस विषय में आवेग, उद्वेग, आक्रोश अथवा अनिच्छा से काम न लेना चाहिये। उन्हें एक हितैषी मित्र की तरह बुरी बातों से बचाना और अच्छी बातों की ओर प्रेरित करना चाहिए।

इस प्रकार जो अभिभावक बच्चों से एक अच्छे मित्र की भांति व्यवहार किया करते हैं उनके बच्चे निःसन्देह योग्य बनकर परिवार तथा समाज दोनों के लिये अच्छे मित्रों की भांति ही उपयोगी बनते हैं।

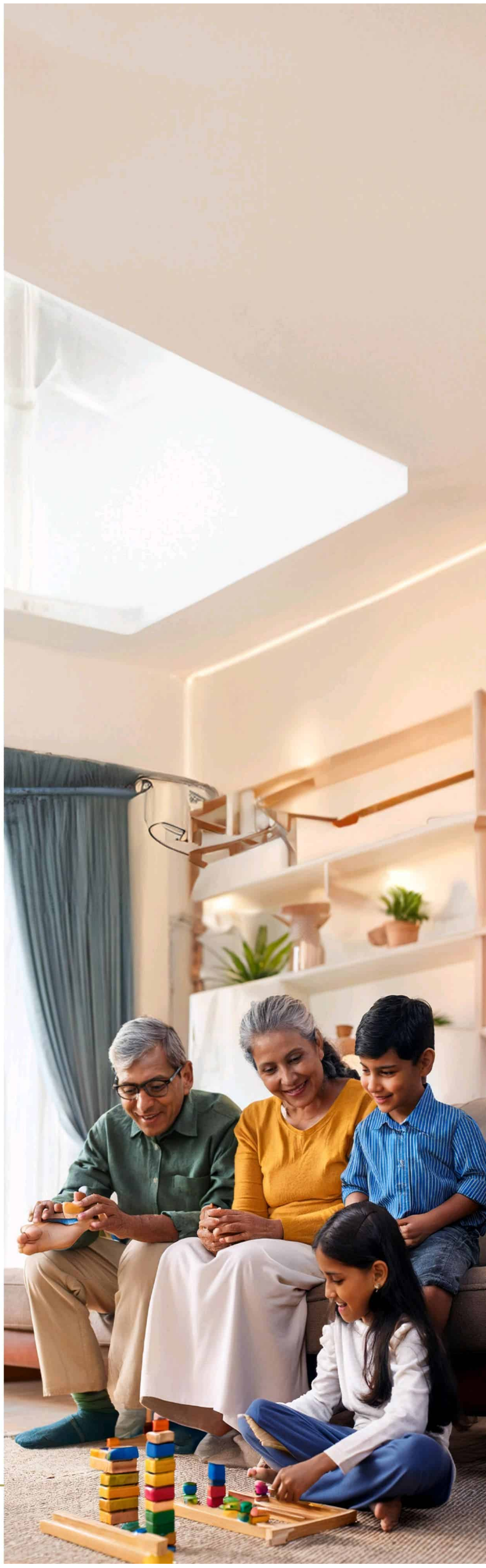

# कहानी
# पंचम दिवस

संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम् ।

- ऋग० १०/ १९१/ २

साथ-साथ बढ़ो, मिलकर बोलो, हृदय में एकता रखो। एकता में ही शक्ति, सुरक्षा, सफलता और शान्ति निहित है ।

**पहेली ?**
**काला रंग मेरी शान, सबको मैं देता हूँ ज्ञान, शिक्षक करते मुझे पर काम, नाम बताकर बनो महान ।**

## मित्रता की मर्यादा

कनक और दया दोनों सहेलियाँ थीं, कक्षा में साथ-साथ ही बैठतीं, पढ़तीं और घर पर भी साथ-साथ ही खेला करती थीं। दया अक्सर अपनी ही माँ की आज्ञा लेकर कनक के घर चली जाया करती थी।

कनक बड़े ही धनी परिवार की थी। उसके पिताजी। उसके लिये अधिक से अधिक खिलौने लाते रहते थे। कनक उनसे दया को भी खेलने देती थी। ये खिलौने दया के नहीं हैं, वह उन्हें छुए नहीं ऐसा तुच्छ विचार कभी उसके मन में भी न आता था। यही नहीं दया जो भी खिलौना माँगती, कनक उसे खुशी-खुशी दे दिया करती।

धीरे-धीरे दया को यह आदत पड़ गयी कि वह कनक से कुछ न कुछ माँगकर ले जाती। कभी कोई खिलौना माँगती, कभी कोई पेन तो कभी कोई फ्राक भी ले जाती। कनक की माँ भी उदार विचारों वाली बड़ी ही सहृदय महिला थी। वे दया के घर की स्थिति भी जानती थीं। अतएव वे कनक को कुछ देने से कभी रोका नहीं करती थीं।

दया सब चीजें अपने घर ले जाती, माँ को दिखाती तो | वे अच्छी हैं कहकर अपने काम में लग जातीं। कभी भी उन्होंने दया से यह नहीं कहा कि तुम इस प्रकार चीजें न माँगा करो। उल्टे दया को जब किसी चीज की जरूरत होती तो वह माँ के आगे कोई फरमाइश रखती तो वे यही कह देतीं कि कनक से ले आना।

अपनी माँ से इस प्रकार प्रोत्साहन मिलने का यह फल हुआ कि दया अब तो हर तीसरे चौथे दिन कोई न कोई माँग करने लगी। यही नहीं, वह कोई भी चीज उठाकर खड़ी हो जाती। 'इसे मैं ले जा रही हूँ कनक' कहकर चलती बनती। कनक बेचारी संकोच के कारण कुछ बोल भी न पाती। दया का इस तरह रोज चीजें माँगना अब कनक को भी बुरा लगने लगा। उसने एक-दो बार घुमा-फिराकर दया से इसके लिये मना भी किया, पर दया पर इसका कोई असर न पड़ता। वह तो पक्की मँगती बन गयी थी।

एक दिन तो हद हो गयी। कनक के पिताजी ने उसे देश-विदेश की रंग-बिरंगी अनेक गुड़िया लाकर दीं। अभी

कनक उनको खोल ही रही थी कि दया भी आ गयी। दोनों सहेलियों ने अलमारी में सारी गुड़ियाँ सजायी। दोनों देर तक उनके कपड़े गहने आदि के बारे में बतियाती रहीं। घर चलते समय रोज की आदत के अनुसार दया ने जापानी और कश्मीरी गुड़िया उठा लीं। वे उसे बहुत ही अच्छी लगी थीं।

जैसे ही दया चलने लगी कि कनक ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोली- 'ये मैं न ले जाने दूँगी।'

'क्यों ?' भौंह चढ़ाते हुए दया ऐसे बोली मानो वह अपनी ही चीज ले रही हो।

''मैं अपना नया सैट बिगाड़ने न दूँगी।' कनक ने कहा।

'ओह ! दो गुड़ियाँ अगर न रखी जायेंगी, तो क्या नुकसान हो जायेगा ?' दया बोली और कनक से हाथ छुड़ाने की कोशिश करने लगी।

'लाओ मुझे मेरी गुड़िया दे दो।' अब गुस्से में भरकर कनक ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये।

दया ने भी तुनककर पूरे जोर से उन्हें (गुड़िया को) जमीन पर पटक दिया। कनक को लगा जैसे किसी ने उसको ही मार दिया हो। दौड़कर उसने गुड़िया उठायीं और अपने हृदय से लगा लिया।

'कुट्टी ! अब हमारी तुम्हारी दोस्ती खतम।' दया चीखकर बोली।

**पहेली का उत्तर : ब्लैक बोर्ड**

'सभ्यता से बोलो दया ! हमारी तुम्हारी दोस्ती तो वैसे भी खतम हो जाती। आखिर मित्रता की कोई मर्यादा होती है। जो अपने दोस्त से रोज-रोज ही कुछ न कुछ माँगता है तो उसकी दोस्ती जल्दी ही खतम हो जाती है। जो बहुत माँगता है, उससे सभी दूर रहना चाहते हैं। वह व्यक्ति जिन्हें अपने पास की चीजों से सन्तोष नहीं होता, दूसरे की वस्तु देखकर ललचाते रहते हैं, कभी सुख और सन्तोष नहीं पा सकते।' कनक ने उस दिन कह ही दिया।

'अब मैं तुम्हारे घर झाकूँगी भी नहीं।' कहकर पैर पटकती दया वहाँ से चली गयी।

अब दया और लड़कियों को अपनी सहेली बनाना चाहती है। शुरू में तो उसका साथ सबको अच्छा लगता है, पर कुछ दिनों बाद ही सभी उससे दोस्ती तोड़ लेते हैं। इसका कारण है दया की माँगने की आदत। फल यह होता है कि अब वे उससे अलग ही हो जाती है। उसके साथ न कोई बैठने को तैयार होता है और न खेलने को।

दया अपने मन में सोचा करती है- 'काश ! और बच्चों की माँ की तरह मेरी माँ ने भी शुरू में ही दूसरों की चीजें लेने से मुझे टोका होता तो आज यह दिन न देखना पड़ता। क्यों सभी मेरा तिरस्कार करते, मुझसे दूर रहते ?

# कहानी
## षष्ठम दिवस

*दृक्षसे संजग्मानो अविभ्युषा ।*

*- ऋग० १। २। ७*

*उनके साथ रहो जो निडर और वीर हैं । कायर और दुर्गुणी का संग न करो ।*

**पहेली ?**

वह क्या है, जो खरीदो तो काला, इस्तेमाल करो तो लाल और फेंको तो सफेद होता है ?

## बैल की ऊर्जा

एक बार एक लोमड़ी को किसी बैल ने बचाया। लोमड़ी ने उसका बड़ा ही आभार माना। वह हाथ जोड़कर कहने लगी- 'दादा! तुम्हारा यह उपकार मैं जीवन भर नहीं भूलूँगी । आज से मैं तुम्हारे साथ रहूँगी, तुम्हारा काम करूँगी।'

कुछ दिनों तक तो सब ठीक-ठाक चला, पर कुछ ही दिनों में लोमड़ी ऊब गई। बैल का जरा सा भी काम करना उसे बुरा ही लगता। बात-बात पर वह खीझ उठती । एक दिन की बात है कि दोनों रात में चने के खेत में घुस गए। हरी-हरी फसल तैयार खड़ी थी। दोनों मुँह मार-मारकर खाने लगे। लोमड़ी का पेट तो छोटा था, थोड़ी देर में भर गया। पर बैल खड़ा खाता ही रहा। कुछ देर तक लोमड़ी बैठी रही । फिर बोली- 'दादा! इतनी देर हो गई, जल्दी चलो ।'

'अभी पेट तो भर लूँ या यों भूखा ही ले चलोगी।' बैल ने खाते-खाते कहा ।

' मुझे तो यहाँ मच्छर खाए ले रहे हैं। फिर डर भी है कि कहीं खेत वाला ही न आ जाए।' लोमड़ी बोली ।

'ऐसा कर कि तू बाहर बैठकर देखती रह । जैसे ही खेत के मालिक के आने की आवाज सुनाई पड़े तो धीरे से मुझे बता देना।'बैल कहने लगा।

लोमड़ी को मन ही मन गुस्सा आने लगा। वह बड़बड़ाने लगी- 'इसका पेट है कि खदान । यह तो है नहीं कि जल्दी से खा-पीकर चलता बने । रोज-रोज मुझे दो घंटे ऐसे ही बिठाता है । किसी दिन इसके चक्कर में मुझ पर भी मार पड़ेगी । बच्चू ! आज तुम्हें भी सबक नहीं सिखाया तो मेरा नाम लोमड़ी नहीं । '

बैल खाते हुए एक-दो बार बीच-बीच में पूछ भी लेता-'कोई आ तो नहीं रहा है ।'

'नहीं दादा! तुम जीभर कर आराम से खाओ, आज तो कोई आता नहीं लगता।' लोमड़ी मीठी वाणी में बोली ।

बस फिर तो बैल पसर कर बैठ गया। चिंता छोड़कर वह खाने लगा। वह मन ही मन में खुश हो रहा था कि आज जैसा तृप्त होकर तो कभी नहीं खाया ।

पर उसकी यह सारी तृप्ति धरी रह गई। पीछे से तड़ाक- तड़ाक दस-बारह डंडे उस पर पड़े। उसे लगा आज तो सारी हड्डियाँ ही चटक जाएँगी। जैसे-तैसे वह उठा फिर बड़ी कठिनाई से लंगड़ाता-लंगड़ाता, डंडे खाता और तमाम गाली सुनता हुआ खेत के बाहर आया।

'तूने मुझे बताया क्यों नहीं ? गुस्से से अपनी आँखें लाल-लाल करते हुए बैल ने पूछा।

'मैंने तो उस आदमी को आते देखा ही नहीं।' लोमड़ी साफ झूठ बोल गई।

बैल उसकी मक्कारी समझ गया। वह भी बहुत दिनों से उसे सबक देने की सोच रहा था। आज तो वह गुस्से से दाँत पीसने लगा। मन ही मन बोला- 'तेरी अकल ठिकाने न लगाई तो मेरा नाम भी हीरा बैल नहीं।'

छह दिनों बाद बैल बोला-'अरी सुनती है! नदी पार एक खेत में सुना है बड़ी भरी-पूरी फसल हुई है। चलेगी क्या ? नदी किनारे तुझे मेंढक और चूहे भी मिल जाएँगे। लोमड़ी खुशी-खुशी उनके लोभ में राजी हो गई। वह तो उस लोमड़ी का अधिक प्रिय भोजन ही था।'

लोमड़ी तो नदी में चल नहीं सकती थी। बैल उसे अपनी पीठ पर बिठाकर नदी पार ले गया। वहाँ उन्होंने पेट भरकर खूब खाया। लोमड़ी ने तो नदी के किनारे मेंढ़क भी इतने खाए कि उससे खड़ा होना भी मुश्किल हो गया। जैसे-तैसे पेट सहलाती वह बैल की पीठ पर सवार हुई। बीच धार में आकर लोमड़ी को एकाएक झटका लगा। वह चीखती हुई बोली- 'यह क्या किया दादा।'

'अरी! मैंने तो डकार ली है।' बैल भी अनजान बनते हुए बोला। वास्तव में बात यह थी कि बैल लोमड़ी को सबक सिखाना चाहता था। इसलिए उसने ही जान-बूझ कर उस लोमड़ी को झटका दिया था।

लोमड़ी तुरंत समझ गई कि यह बैल की जान-बूझकर की गई करतूत है। पानी में वह बस डूबने ही वाली थी। जोर से चीखी-'बचाओ, दादा बचाओ।'

बैल उसे जान से मारना तो नहीं चाहता था। बस, थोड़ा सा सबक ही देना चाहता था। बैल ने तुरंत ही आगे बढ़कर लोमड़ी को पानी की तेज धार में बहने से रोका। अपनी पीठ पर चढ़ाकर नदी पार करा दी।

किनारे पर आकर बैल कहने लगा- 'तुझसे कुछ बात कहनी है। देख! तू यह न समझ कि तू ही बहुत तेज-तर्रार है। तुझमें चालाकी अधिक है तो मुझ में शारीरिक बल। तू यह न सोचना कि मुझे तंग कर लेगी।

सदैव उसका हित ही सोचा था। ऐसा सीधा और भलाई करने वाला दोस्त लोमड़ी को मिलता भी कहाँ ? वह आगे बढ़ी और बैल के मुँह से अपना मुँह रगड़ते हुए बोली- 'दादा! अबकी बार और माफ कर दो फिर कभी गलती करूँ तो मेरे कान पकड़कर खींचना।'

बैल ने भी उसके सारे अपराध भूलकर उसको फिर से मित्र बना लिया था।

**पहेली का उत्तर : कोयला**

# कहानी
# सप्तम दिवस

अमृत विवासत ।

-ऋग० ६। ११२

उत्साही और आशावादी का ही साथ करो । उनसे दूर रहो जो निराशावादी हो ।

**पहेली ?**

दो सुंदर लड़के, दोनों एक रंग के, एक बिछड़ जाए तो दूसरा काम न आए ।

## मित्रता की परख

रत्नागिरी की पहाड़ियों में एक पेड़ के नीचे बिल बनाकर एक खरगोश रहता था। बचपन में ही उसके माता-पिता मर गये थे। उसका कोई सगा सम्बन्धी भी न था।

जब खरगोश बड़ा हो गया तो उसने सोचा कि अब मुझे विवाह कर लेना चाहिये । गृहिणी आयेगी तो काम-काज में भी हाथ बँटायेगी और सूना घर काटने के लिये भी न दौड़ेगा।

यह सोचकर वह खरगोश पास ही रहने वाले एक वृद्ध दम्पत्ति के पास गया। उनसे उसने यह प्रार्थना की कि वे अपनी बेटी का विवाह उसके साथ कर दें।

'कौन-कौन हैं तुम्हारे घर-परिवार में ?' वृद्ध खरगोश उससे पूछा।

खरगोश ने बता दिया कि उसके माता-पिता बचपन में ही मर चुके हैं। 'कोई रिश्तेदार भी नहीं है।'

'मित्र तो होंगे ही।' फिर उससे पूछा गया।

"नहीं मेरा कोई मित्र भी नहीं है। अकेला ही हूँ मैं तो।' खरगोश उदास होकर कह रहा था।

'तो जाओ पहले तुम मित्र बनाकर आओ । तभी तुम्हारे साथ हम अपनी बेटी का विवाह करेंगे। जिसका कोई मित्र नहीं, घर-परिवार में कोई नहीं तो मुसीबत पड़ने पर उसकी कौन सहायता करेगा ?' वृद्ध खरगोश दम्पत्ति बोले।

निराश होकर खरगोश चल पड़ा मित्र बनाने। आखिर विवाह तो उसे करना ही था।

रास्ते में मिली एक मधुमक्खी । खरगोश बोला'दीदी दीदी ! क्या तुम मुझसे दोस्ती करोगी ?'

फूल का रस चूसती हुई मधुमक्खी बोली- 'मैं क्या जानूँ तुम कौन हो और कैसे हो ? तुमसे मित्रता हो भी कैसे सकती है ?'

रोने रोने को हो आया खरगोश । उसे लगा कि मधुमक्खी मना कर ही देगी। बहुत ही खिन्न मन से उसने मधुमक्खी को बताया यह सब कि यदि उसका कोई मित्र नहीं बनेगा तो उसका विवाह भी नहीं होगा।

मधुमक्खी को दया आ गयी। सोचने लगी कि मेरे द्वारा किसी का उपकार हो जाये तो अच्छा ही है। क्योंकि जो बिना किसी बदले की भावना के उपकार करता है वही सज्जन कहलाता है। यदि किसी वस्तु की इच्छा से उपकार किया तो उसमें कौन-सी महानता है ? ऐसा उपकार तो सभी कर देंगे। अतएव वह अपने पंखों को तेजी से घुमाकर खरहे से बोली- 'खरहे भाई! मैं तुम्हारी मित्रता स्वीकार करती हूँ पर याद रखना कभी बुरा सोचा, धोखा देने की कोशिश की तो दोस्ती खतम हो जायेगी । मित्र बनाना सरल है, पर मित्रता का निर्वाह करना कठिन हुआ करता है।'

'समय आने पर तुम मुझे परख लेना। मैं बहुत अच्छा दोस्त साबित होऊँगा ।' खरगोश बोला। उसने मधुमक्खी का बहुत-बहुत आभार माना और आगे बढ़ गया।

थोड़ी दूर चलने पर एक गिलहरी मिली।

'गिल्लो दीदी ! मैं तुमसे दोस्ती करना चाहता हूँ खरगोश दाँत निकालकर दोनों हाथ जोड़कर नमस्ते करते हुए उससे बोला।

'क्यों ?' गिलहरी ने गर्दन ऊपर उठाकर पूछा।

'यदि मित्र न हो तो संसार वन जैसा है।' खरगोश ने कहा।

गिलहरी खुशी से दाँत निकालती हुई बोली-' वाह ! तुम तो बड़े दार्शनिक और ज्ञानी लगते हो, तुमसे दोस्ती अच्छी रहेगी। ज्ञानी मित्र जीवन का सबसे बड़ा वरदान है।'' गिलहरी और खरगोश ने जोरों से हाथ मिलाकर दोस्ती पक्की की।

अब खरगोश खुशी-खुशी वृद्ध दम्पत्ति के पास पहुँचा। बड़ी ही खुशी से उसने बताया कि उसके दो मित्र बन गये हैं।

'ठीक है-ठीक है । अधिक मित्र जो विश्वासघाती हों, समय पर सहायता न करें तो उनकी अपेक्षा दो-चार सच्चे मित्र ही होना अच्छा है।' वृद्ध खरहे ने कहा।

और तब वृद्ध दम्पत्ति ने अपनी बेटी का विवाह खरहे के साथ कर दिया। खरगोश अपनी खरही के साथ बड़े ही सुखपूर्वक रहने लगा। उसके दोनों मित्र मधुमक्खी और गिलहरी भी उसके घर रोज आते ही थे। खरही सभी का खुशी-खुशी स्वागत करती। उन्हे जलपान कराती, उनसे मीठी वाणी बोलती। सभी मिल-जुलकर खाते-पीते और मौज मनाते । खरगोश सोचता- 'देखो ! मैं कितना मूर्ख रहा जो इतने दिनों तक मित्रों से वंचित अकेला पड़ा कुढ़ता रहा, दुःख उठाता रहा। अकेले में न तो आनन्द ही पूरा मिलता है, न दुःख ही कम होता है। सच्चा मित्र ही दुःख को कम करता है।' आनन्द से खरगोश - खरही के दिन बीत रहे थे। तभी एक दिन की बात है कि दोनों

प्रातःकाल की ठण्डी - ठण्डी हवा में घूमने जा रहे थे । आगे-आगे था खरगोश , पीछे-पीछे थी खरही । अचानक खरगोश चिल्ला उठा-'अरे ! तुम आगे एक पैर भी न बढ़ाना । यहाँ शिकारियों ने तो जाल बिछा रखा है ।' खरगोश बुरी तरह जाल में फँस गया था । खरही उसकी बात सुनकर एकदम वहीं ठिठक गयी । खरगोश जाल से निकलने के लिये छटपटा रहा था । खरही सोचने लगी- 'क्या करूँ, कैसे इसे जाल से निकालूँ ? कहीं ऐसा न हो कि जल्दी ही शिकारी आ जायें ।'

तभी खरगोश बोला- 'अरी सुनती हो ! मैं अपने आप तो जाल से निकलने से रहा । क्यों न तुम दौड़कर गिलहरी और मधुमक्खी के पास चली जाओ । मित्रों की परख दुःख में ही होती है । सुख में तो सभी साथ दे देते हैं । जो संकट पड़ने पर प्राणपण से मित्र का दुःख दूर करता है वही सच्चा मित्र होता है ।'

'ठीक कहते हैं आप ! मैं दोनों को अभी बुलाकर लायी । खरगोशनी बोली और तेजी से दौड़ गयी वहाँ से । 'गिल्लो दीदी ! गिल्लो दीदी दौड़ो । वे तो मृत्यु के मुख में पड़े हैं ।' यह कहते हुए खरगोशनी ने जल्दी-जल्दी गिलहरी को पूरी बात बतलाई । 'वह मित्र भी कैसा जो समय पड़ने पर मित्र की सहायता न करे ।' गिलहरी ने कहा और तेजी से दौड़ गयी उस जगह जहाँ खरगोश जाल में फँस गया था ।

अपने पैने-पैने दाँतों से गिलहरी जाल काटने लगी । खरगोशनी सोचने लगी विपत्ति में एक से दो भले। क्यों न मैं मधुमक्खी को भी बुला लाऊँ ।

गिलहरी और खरगोशन ने मना भी किया, पर खरगोशनी बोली- 'हम नहीं जानते कब, किस अनजानी मुसीबत में फँस जायेंगे । अपनी ओर से संकट के प्रतिकार का पूरा-पूरा प्रयास करना ही चाहिये ।' और वह मधुमक्खी की तलाश में निकल पड़ी ।

खरही जब वापस आयी तो जाल थोड़ा-सा ही कटने को शेष रह गया, पर तभी उसकी निगाह सामने से आते शिकारी पर पड़ी । 'हे भगवान अब क्या होगा ?' मन ही मन में उसने सोचा । सहसा तभी मधुमक्खी जो अपनी पूरी सेना के साथ आ रही थी, शिकारी पर टूट पड़ी । मधुमक्खियों के आक्रमण से घबराकर शिकारी तेजी से वहाँ से भाग निकला । थोड़ी ही देर में जाल पूरी तरह से कट गया । खरगोश उछल कर निकल आया । आते ही वह गिलहरी और मधुमक्खी के गले से लग गया और बोला- 'तुमने अपने प्राणों को संकट में डालकर मेरी रक्षा की है । तुम दोनों का यह उपकार मैं जीवन-भर नहीं भूलूँगा । वास्तव में सज्जनों की मैत्री ही जीवन की रक्षा करती है, जीवनोत्थान करती है ।

**पहेली का उत्तर : जूते का जोड़ा**

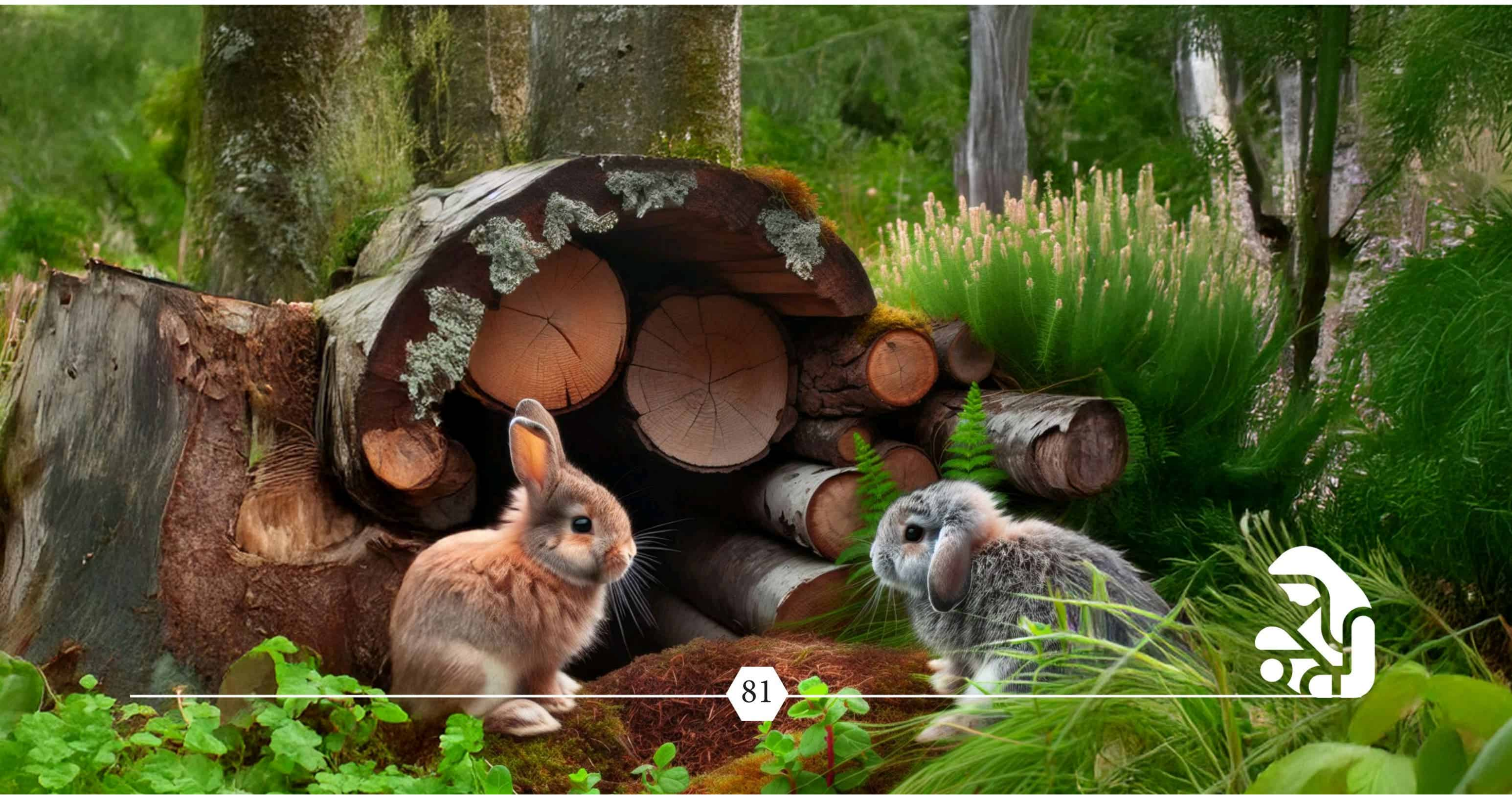

# कृष्णा और सुदामा

कृष्ण और सुदामा की मित्रता अपार धनी थी ।
गुरु संदीपनि के आश्रम में, यह जोड़ी सुदढ़ बनी थी ।।

पर भविष्य में काल चक्र ने दोनों को विलगाया ।
शिक्षक बने सुदामा-नृप-पद वासुदेव ने पाया ।।

कृष्ण द्वारिकाधीश बने-था राजपाट अति भारी ।
थे नीतिज्ञ महान वीर, थी प्रजा अतीव सुखारी ।।

पास सुदामा के विद्या थी किंतु न श्री का फेरा ।
ज्ञान दान करते रहते थे लोक सुयश था चेरा ।।

आय और सम्पत्ति वही जो भिक्षाटन कर लाते ।
कुटिया में पत्नी समेत जीवनी सहर्ष चलाते ।।

इच्छा थी कि अगर हो पैसा, गुरुकुल एक बनाऊँ ।
ज्ञानदान हो अधिक-छात्र संख्या मैं और बढ़ाऊँ ।।

लेकिन अर्थाभाव देखकर मन मसोस रह जाते ।
उच्च योजना का विस्तार नहीं यों वे कर पाते ।।

एक दिवस पत्नी बोली- ‘प्रिय आप द्वारिका जायें ।
मित्र आपके नृपति कृष्ण हैं, उनको बात बताएँ ।।

हैं समर्थ वे, मार्ग कुछ न कुछ अवश्य बतलाएँगे ।
वे देकर सहयोग मनोरथ पूरा करवाएँगे ।।

किंतु हुआ संकोच सुदामा को-कुछ दिन तक टाला ।
पर पत्नी ने इस प्रसंग को विस्मृति में नहिं डाला ।।

पीछे पड ही गयी एक दिन, भेजा सुदामा को ।
जनहित की थी बात-मना कर नहीं सके भामा को ।।

मिले कृष्ण से जाकर-उनने भी योजना सराही ।
मिले मित्र को सुयश-लोकहित हो-बातें मनचाही ।।

बहुत दिनों में मित्र मिले थे दृग जल खूब बहाया ।
जगती में आदर्श मित्रता का उनने रखवाया ।।

कहा द्रव्य यह जनता का है-जनहित में लग जाये ।
इससे बड़ा काम क्या होगा-जनजन शिक्षा पाये ।।

**- माया वर्मा**

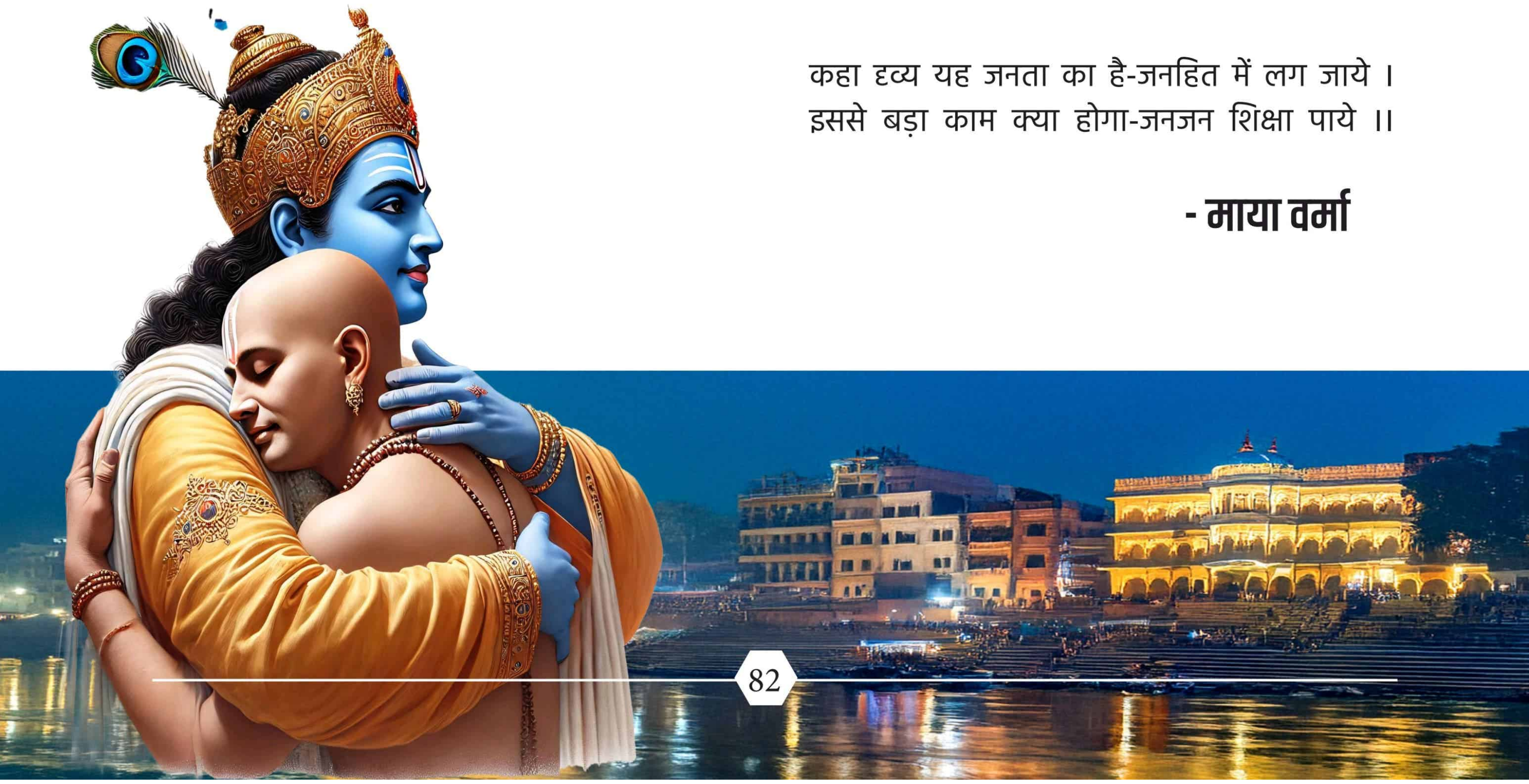

# गीत

## तोता

ऊपर उड़ने वाला तोता ।
काश हमारे घर पर होता ।।

सुन्दर सा पिंजरा मँगवाते ।
गुब्बारें से उसे सजाते ।।

हरी मिर्च, मूली फल गाजर ।
देते तुझको नित हम लाकर ।।

जब तू कुतर-कुतर कर खाता ।
कितना मजा हमें भी आता ।।

सुनकर तेरी मीठी बोली ।
हँसने लगती नीतू भोली ।।

तुझको अपना मित्र बनाते ।
खुशी-खुशी तुझको सहलाते ।।

**-माया वर्मा**

# अभ्यास के बिंदु

- बच्चों को अच्छा मित्र बनाइये ।
- चतुर माली के व्यवस्थित उद्यान की भांति बच्चों की देख-रेख करें ।
- ध्यान रखें कि कहीं आपके बच्चे आपसे भयभीत तो नहीं रहते हैं ।
- आपको देखते ही बच्चे प्रसन्न हो उठें ।
- बाहर की खीज बच्चों पर न उतारें ।
- बच्चों के हंसने-बोलने में हिस्सा लीजिये ।
- बच्चों की भी सुनिए / उनकी अभिरुचि जानिए ।
- बच्चों की उलझनें विवेकपूर्वक सुलझाएं ।
- चोट लगने पर बच्चे को डांटे नहीं सहायता करें ।